# इकाई 11 रस तथा भाव

**इकाई की रूपरेखा**


11.0 उद्देश्य

11.1 रस किसे कहते हैं? यह बोध प्राप्त करना।

11.2 रस की निष्पत्ति कैसे होती है? यह ज्ञान करना।

11.3 रस के भेदों का ज्ञान प्राप्त करना।

11.4 भाव का परिचय प्राप्त करना।

11.5 विभाव को जानना।

11.6 अनुभाव का परिचय प्राप्त करना।

11.7 सात्त्विकभाव का परिचय प्राप्त करना।

11.8 स्थायीभाव का परिचय प्राप्त करना।


## 11.0 उद्देश्य

रस तथा भाव के वर्णनों की प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप :

- रस किसे कहते हैं, जान सकेंगें।
- रस की निष्पत्ति कैसे होती है? इसका वर्णन कर सकेंगें।
- रस के भेदों का उल्लेख कर सकेंगें।
- भाव का परिचय बता सकेंगे।
- विभाव की व्याख्या कर पायेंगे।
- अनुभाव का परिचय दे सकेंगे।
- सात्त्विकभाव का परिचय बता सकेंगे
- स्थायीभाव का उल्लेख कर सकेंगे।

## 11.1 प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय में नाट्यशास्त्र के अलावा अन्य काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों का अपने अपने कालखण्ड में निर्माण होता रहा है। जिनका उद्देश्य नाट्यशास्त्र में वर्णित रस, भाव, विभाव, अनुभाव, व्यभिचारिभाव और सात्त्विक भावों के साथ अन्य काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का विमर्शात्मक विकास करना रहा है जो कि हमें विविध ग्रन्थों के अध्ययन से प्राप्त होता है। प्रत्येक मनुष्य या प्राणि मात्र के हृदय में विविध प्रकार के भाव सुषुप्तावस्था में विद्यमान रहते हैं और जब लोक में जिस प्रकार का अनुकूलत्व उन्हें प्राप्त होता है वे तदनुसार प्रकट होते हैं। उन भावों का अत्यधिक चिन्तन शास्त्रकारों के द्वारा किया गया तब वे भाव अनगिनत होते हुए भी कुछ संख्या में समाहित हो गये और और उन्हीं के अनुसार विविध प्रकार के रसों का निर्णय किया गया है। किसी मनुष्य को दुःख का आघात होता है तब वह क्रन्दन करता है उसकी आंखों से आँसू

आ जाते हैं तब उसकी दयनीय स्थिति निर्मित होती है और वह करुण रस से संयुक्त है तथा उसका वह आस्वादन हृदय से कर रहा है ऐसा जाना जाता है। उसके रोने की स्थिति से वह करुण रस में स्थित है ऐसा आभास हमें होता है, यही लोक में रस कहा गया है। इस रस की क्या परिभाषा है, यह कैसे उत्पन्न होता है, ये कितनी संख्या में है, जिनसे ये पहचाने जाते हैं वे तत्त्व कौन हैं, क्या हैं, कितने हैं, इन सबके सहायक तत्त्व और रस की अनुभूति के बाद के तत्त्व किसे कहते हैं और वे कौन हैं, उन सबका वर्णन हम इस इकाई में करेंगे।

## 11.2 रस : परिभाषा तथा स्वरूप

विभाव, अनुभाव, सात्त्विक और व्यभिचारि साधक भावों के माध्यम से जब साध्य स्थायी भाव को इस प्रकार निर्मित कर देना जिसका जन सामान्य दर्शकों के द्वारा हृदय से आस्वादन लिया जा सके, अनुभूत किया जा सके उसको रस कहते है। रस का जिनके द्वारा आस्वादन किया जाता है वे जन रसिक कहे जाते हैं। जब नायक और नायिका एकान्त स्थल में स्थित होते हैं और दोनों के द्वारा जब एक दूसरे का आलिंगन किया जाता है तथा चुम्बन आदि क्रियाएं की जाती हैं तब दर्शक द्वारा श्रृंगार रस के अन्तर्गत सम्भोग श्रृंगार रस का आस्वादन किया जाता है। इसी प्रकार जब नायक और नायिका जब एक दूसरे से दूर होते हैं और एक दूसरे का विरह संताप सहन करते हैं तब उसी सामाजिक के द्वारा श्रृंगार रस के द्वितीय भेद विप्रलभ्भ श्रृंगार रस का आस्वादन लिया जाता है। यथा –

**''विभावैरनुभावैष्च सात्त्विकैर्व्यभिचारिभिः।**
**आनीयमानः स्वाद्यत्वं स्थायी भावो रसः स्मृतः।।''**

**(दशरूपक, 4/1)**

**और भी –**

**''विभावेनानुभावेन व्यक्तः संचारिणा तथा।**
**रसतामेति रत्यादिः स्थायी भावः सचेतसाम्।।''**

**(साहित्यदर्पण, 3/1)**

आचार्य विश्वनाथ रस के स्वरूप का विमर्श प्रस्तुत करते हैं इसके अन्तर्गत वे कहते हैं – सत्त्व की अधिकता होने के कारण वह रस अखण्डस्वरूप है, रस नित्य स्वयं से प्रकाशित होता है, वह रस सकल सुखों का आकर होने के कारण आनन्दमय होता है और वह चिन्मय रूप में प्रतीत होता है, अन्य जानने योग्य पदार्थ के स्पर्श से शून्य होता है, ब्रह्मज्ञान के आनन्द का आस्वादन कराने वाले उस तत्त्व का सहोदर अर्थात् एक ही माता से उत्पन्न भाई के समान है, इतना ही नहीं वह रस इस लोक से भिन्न किसी अन्य लोक का तत्त्व है जो सहृदयों में चमत्कारस्वरूप आन्नद को प्रकट करने वाला जीवन प्राण है जिसका दर्शक या सामाजिक पुण्यशालियों के द्वारा अपने हृदय में जिस रस का जैसा स्वरूप है उस स्वरूप के समान एकत्व होकर के उस रस का आस्वादन लिया जाता है। यथा –

**''सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः।**
**वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वादसहोदरः।।**
**लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कैश्चित् प्रमातृभिः।**
**स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः।।''**

**(साहित्यदर्पण, 3/2,3)**

## 11.3 रस निष्पत्ति के उपादान

रस की निष्पत्ति के विषय में आचार्य भरत मुनि के द्वारा सर्वप्रथम बतलाया गया है कि काव्यगत रस की अनुभूति आदि में सहायक तत्त्व विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव इन तीनों के संयोग होने पर रस की निष्पत्ति होती है। जैसा कि भरतमुनि ने प्रसिद्ध रस सूत्र में निरूपित किया है– **''विभावानुभावव्यभिचारिभावसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः''**। दशरूपक की टीका में धनिक ने रस की उत्पत्ति के विषय में षट्साहस्रीकार के मत का उद्धरण देकर कहा है विभाव जब सामान्य गुणों से युक्त होता है तब वह रस की निष्पत्ति करता है यथा – **''एभ्यश्च सामान्यगुणयोगेन रसा निष्पद्यन्ते''**। इस प्रकार रस निष्पत्ति में विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिभावों को उपादान के रूप में माना जाता है। इसी मत को आचार्य मम्मट के द्वारा भी उद्धृत किया गया है – **''व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः''**।।

## 11.4 रस भेद

आचार्य भरत मुनि ने सर्वप्रथम अपने ग्रन्थ में रस के आठ भेदों को स्वीकार किया है। इसके अलावा भी आचार्य अभिवन गुप्त के द्वारा नौवें रस की कल्पना की गई है। इसी क्रम में आचार्य मम्मट ने भी सर्वप्रथम आठ रसों को रखकर अन्त में नौवें शान्त रस को बतलाया है। आचार्य विश्वनाथ भी इन्हीं नौ रसों का वर्णन करते हैं। महाकवि भवभूति एक मात्र करुण को ही प्रधान तथा एक मात्र रस के रूप में स्वीकार करते हैं। महाराज भोजराज अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ श्रृंगारप्रकाश में श्रृंगार रस को ही मूल रस के रूप में स्वीकार करते है। आचार्य विश्वनाथ अद्भुत रस को ही सभी रसों का मूल स्वरूप स्वीकार करते हैं और अभिनव गुप्त शान्त रस सभी रसों का मूल है, ऐसा स्वीकार करते हैं। इन सभी रसों के देवता, वर्ण, स्थायी भावों, उदाहरणों और रसों के आन्तरिक भदों का वर्णन प्राप्त होता है। नौ रस इस प्रकार हैं – प्रथम रस शृङ्गार, द्वितीय रस हास्य, तृतीय रस करुण, चतुर्थ रस रौद्र, पंचम रस वीर, षष्ठ रस भयानक, सप्तम रस बीभत्स, अष्टम रस अद्भुत और नवम रस शान्त है। इसके अलावा गोस्वामी आदि भक्तकवियों के द्वारा भक्ति रस तथा सूरदास जी के द्वारा वात्सल्य रस को भी स्वीकार किया गया है। यथा –

**''श्रृंगारहास्यकरुणा रौद्रवीरभयानकाः।**
**बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृता।।''**

**( नाट्यशास्त्र, 6/16)**

**''शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः।**
**बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः।।''**

**(काव्यप्रकाश, 4/29)**

**''शान्तोऽपि नवमो रसः।''**

**(काव्यप्रकाश, 4/44)**

| रस | स्थायी भाव | वर्ण | देवता | मूल प्रवृत्तियां |
|---|---|---|---|---|
| शृंगार | रति | श्याम | विष्णु | काम प्रवृत्ति |
| हास्य | हास | श्वेत | शिव के प्रमथ गण | आमोद |
| करुण | शोक | कपोत | यम | शरणागति |
| रौद्र | क्रोध | रक्त | रुद्र | युयुत्सा |
| वीर | उत्साह | चमकीला सफेद | महेन्द्र | आत्माभिमान |
| भयानक | भय | काला | काल देव | पलायन या आत्मरक्षा |
| बीभत्स | जुगुप्सा | नीला | महाकाल | वैराग्य |
| अद्‌भुत | विस्मय | पीला | ब्रह्म | कौतुहल |
| शान्त | निर्वेद | पीला | बुद्धदेव | आत्मदीनता |
| वात्सल्य | स्नेह | | | पुत्र प्रेम |
| भक्ति | भगवद् विषयक प्रेम | | | देव विषयक रति |

## 11.5 भाव : परिभाषा

नाटक आदि में नट के द्वारा रामादि का जो अभिनय प्रस्तुत किया जाता है और उस अभिनय में जो क्रियात्मकता है उस क्रियात्मकत्त्व के द्वारा दर्शक सामाजिकों का हृदय जब उससे एकात्मक हो जाता है तब नायक का जो मानसिक विकार है वह विकार जिस प्रकार से सामाजिकों हृदय में उपस्थित होता है तथा प्रकट स्वरूप में दिखाई देता है उसको ही भाव कहा जाता है। जैसे उत्तररामचरित में राम का पंचवटी में स्थानों को देखकर उन से सम्बन्धित घटनाओं का स्मरण कर दुःखी होना और करुणा प्रकट करना ही भाव है इस दृश्य को देखकर सामाजिकों की आखों में आँसू आ जाना तथा दुखी होना भी भाव है।

सुखदुःखादिकैर्भावैर्भावस्तद्‌भावभावनम्।।

(दशरूपक, 4/4)

''नानाभिनयसम्बन्धान् भावयन्ति रसान् यतः।
तस्माद् भावा अमी प्रोक्ताः स्थायिसंचारिसात्त्विकाः।।''

(साहित्यदर्पण, 3/181)

## 11.6 विभाव

**''विभाव इति विज्ञातार्थ इति''** इस प्रकार दशरूपक में विभाव शब्द की परिभाषात्मक व्युत्पत्ति प्राप्त होती है जिसका अर्थ है विशिष्ट प्रकार से ज्ञान प्राप्त करन ही विभाव है। इस प्रकार नायक के द्वारा किये गये अभिनय को देखकर जो ज्ञान प्राप्त होता है उससे हृदय में भाव उत्पन्न होते हैं उन भावों का आस्वादन करना ही विभाव है। विभाव से रसों के स्थायी भाव परिपुष्ट होते हैं और स्थायी भावों के प्रबल होने से रस

का निर्मित स्वरूप सामाजिक को प्राप्त होता है। विभाव रस का हेतुभूत अंग है। विभाव के दो भेद प्राप्त होते हैं– आलम्बन और उद्दीपन।

**''ज्ञायमानतया तत्र विभावो भावपोषकृत्।**
**आलम्बनोद्दीपनत्वप्रभेदेन स च द्विधा।।''**

**(दशरूपक, 4/2)**

उदाहरण के माध्यम से हम इसको समझने का प्रयास करते हैं। श्रृंगार रस का स्थायी भाव रति है। रति स्थायी भाव को प्रकट करने के लिए नायक और नायिका का जो भ्रूविलास और आलिंगन रूप प्रयत्न है वह कारणस्वरूप उद्योग ही विभाव कहा जाता है। नायिका को देखकर नायक का मन उसके प्रति आकर्षित होता है और नायक उससे मिलन की इच्छा करता है तब नायिका आलम्बन है और उस नायिका के आस – पास प्रकृति निर्मित जो स्थितियाँ है जैसे मनोहर मौसम, ठण्डी हवाओं का चलना, सुन्दर हरयाली आदि अनुकूल स्थिति को प्रकट करने वाले जो तत्त्व हैं वे उद्दीपन विभाव कहे जाते हैं।

## 11.7 अनुभाव

जब सामाजिक दर्शक गण रस की अनुभूति को प्राप्त कर लेते हैं तब उसके बाद में उत्पन्न उस रस का कार्य ही अनुभाव कहलाता है। रति आदि रसों के जो स्थायी भाव कहे गये हैं उन स्थायी भावों की सूचना जिसके माध्यम से दर्शक को प्राप्त होती है वे तत्त्व अनुभाव कहे जाते हैं। अनुभाव रस का कार्यभूत अंग जाना जाता है। यथा–

**''अनुभावो विकारस्तु भावसंसूचनात्मकः।।''**

**(दशरूपक, 4/3)**

उदाहरण से इसको समझने का प्रयास करते हैं। देखिए जब रंगस्थल में नायक और नायिका दोनों ही विद्यमान हों और नायिका अपनी भ्रूविलास के माध्यम से नायक को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करती है तथा नायक का आकर्षित होकर उसके पास जाना और दोनों का आलिंगन करना दर्शक के द्वारा जब यह दृश्य देखा जाता है तब रति स्थायी भाव की प्रतीति होती है। उसके बाद का जो अनुभव दर्शक के द्वारा अनुभूत किया जाता है, वह अनुभाव है।

## 11.8 सात्त्विक भाव

''**अवहितं मनः सत्त्वं तत्प्रयोजनं हेतुरस्येति सात्त्विकः**'' अर्थात् अनन्यवृत्ति से संयुक्त मन को ही सत्त्व की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है, और इसके द्वारा जिसको साध्य किया जाता है वह सात्त्विक कहलाता है। मंच पर जब अभिनेता विविध विचारों से ग्रसित होता है तब वह सात्त्विक भाव को प्रकट करने में समर्थ नहीं होता है और जब वह सभी वैचारिक अवस्था का परित्याग कर एकाग्र की अवस्था को प्राप्त करता है तब वह सात्त्विक भाव को प्रकट करने में समर्थ होता है। यदि इसे साधारण भाषा में कहा जाए तो इसे हम स्वभाव से ही विना परिश्रम के जो भाव स्वतः प्रकट हो जाते हैं उन्हें सात्त्विक भाव कहते हैं। उदाहरण के लिए डरे हुए व्यक्ति के रोंगटे खड़े हो जाना स्वभाविक है और भी अपने किसी परिवार में स्थित या कोई भी जिससे हमारा

दिल से नाता है उसकी मृत्यु हो जाए तो आंखों में आँसुओं का आ जाना स्वभाविक है इसके लिए कोई परिश्रम नहीं करना पड़ता है।

द्रष्टव्य है –

**''इह हि सत्त्वं नाम मनः प्रभवम्। तच्च समाहितमनस्त्वादुच्यते। मनसः समाधौ सत्त्वनिष्पत्तिर्भवति। तस्य च योऽसौ स्वभावो रोमांचाश्रुवैवर्ण्यादिलक्षणो यथाभावोपगतः स न शक्योऽन्यमनसा कर्तुमिति लोकस्वभावानुकरणत्वाच्च नाट्यस्य सत्त्वमीप्सितम्।।''**

**(नाट्यशास्त्र, 6/93)**

सत्त्व अर्थात् मनुष्य या मानव के अन्तःस्थ हृदय में नित्य सुषुप्तावस्था में रहने वाले तत्त्व जिनके माध्यम से या प्रकटीकरण से रसादि की प्रतीति होती है उनसे जिस प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं उनकों ही सात्त्विक भाव कहते हैं। यथा –

**''विकाराः सत्त्वसम्भूताः सात्त्विकाः परिकीर्तिताः।।''**

**(साहित्यदर्पण, 3/134)**

सात्त्विक भाव अनुभावों से पृथक माने जाते हैं। साहित्यदर्पण में आचार्य विश्वनाथ ने इस सन्दर्भ में गोबलीवर्दन्याय के माध्यम से बतलाया है। वह कहते हैं कि बलीवर्द का विश्व में प्रसिद्ध अर्थ बैल है। बलीवर्द शब्द से धेनु जो कि एक स्त्रीलिंग प्रधान है उससे तो भिन्न है परन्तु वृषभरूप गोत्व जाति से अभिन्न है। इसी प्रकार स्तम्भ आदि प्राप्त सात्त्विक भाव अनुभाव से पृथक् तो है परन्तु इनका जो स्वरूप है वह अपृथक् होता है। इस प्रकार दोनों में भेद और अभेद एक साथ प्राप्त होते हैं। सात्त्विक भाव के आठ प्रकार प्राप्त होते हैं। यथा – स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वभंग, वेपथु, वैवर्ण्य, अश्रु और प्रलय।

**स्तम्भ–**

मनुष्य जब भाव विह्वल हो जाता है अर्थात् जब उसका मन हृदयस्थ भावों से संक्रान्त होता है उस समय उन उत्पन्न भावों के कारण जब कुछ क्षणों के लिए वह निश्चेष्ट हो जाता है तब इसी अवस्था का नाम स्तम्भ कहा जाता है। यथा –

**''स्तम्भश्चेष्टाप्रतीघातो भयहर्षामयादिभिः।''**

**स्वेद–**

स्वेद का हिन्दी अर्थ पसीना है जब भी कोई व्यक्ति अत्यधिक परिश्रम करता है या किसी कारण से भयभीत होता है तब उसके शरीर के रोम कूपों से जलस्वरूप एक विशेष प्रकार का द्रव्य बाहर निकलता है, उसी को स्वेद कहते हैं। यथा –

**''वपुर्जलोद्गमः स्वेदो रतिघर्मश्रमादिभिः।।''**

**रोमांच–**

जब भय, विस्मय और हर्ष आदि विकारों के कारण रोम केशों की स्थिति सामान्य स्थिति से भिन्न हो जाती है अर्थात् जिसे सामान्य बोली में रोंगटे खडा होना कहते हैं इस स्थिति को रोमांच कहते हैं। यथा –

**''हर्षाद्भुतभयादिभ्यो रोमांचो रोमविक्रिया।।''**

**स्वरभंग–**

जब हम अत्यधिक आनन्द या शोक की स्थिति में होते हैं तब हम उस भाव के आवेश के कारण कुछ भी कहने में असमर्थ अनुभव करते हैं उस समय हमारी वाणी अवरुद्ध हो जाती है वाणी की इस स्थिति को हम स्वर भंग कह सकते हैं। यथा –

**''मदसम्मदपीडाद्यैर्वैस्वर्यं गद्गदं विदुः।।''**

**वेपथु–**

किसी के द्वारा जब अत्यधिक परिश्रम किया जाता है उस स्थिति में या बहुत अधिक राग अर्थात् प्रेम की स्थिति या कोई अन्य भावुक करने वाली स्थिति में शरीर में कम्पन का विकार उत्पन्न होता है तो उसे वेपथु कहा जाता है। यथा –

**''रागद्वेषश्रमादिभ्यः कम्पो गात्रस्य वेपथुः।।''**

**वैवर्ण्य–**

जब मनुष्य किसी भाव के प्रवाह में आता है तब उसके द्वारा उच्चारित होने वाले शब्दों में जब विकार उत्पन्न होता है तो उसे ही वैवर्ण्य कहा जाता है। जैसे जब कोई व्यक्ति अत्यधिक शोक को प्राप्त करता है तब उसका हृदय भर आता है इस कारण से उसके द्वारा उस समय कुछ भी बोला जाना सम्भव नहीं होता है तब वह ऐसी स्थिति में कुछ बोलने का प्रयास करता है तो जिन शब्दों का प्रयोग वह करना चाहता है उन शब्दों का सटीक सटीक उच्चारण नहीं कर पाता है। यथा –

**''विषादमदरोषाद्यैर्वर्णान्यत्वं विवर्णता।।''**

**अश्रु–**

सभी जानते हैं कि अश्रु या आँसू नेत्रों से बाहर निकलने वाला जल है। जब कोई व्यक्ति किसी भी प्रकार से शोक, दुःख, चिन्ता, अवसाद, प्रेम या किसी भी प्रकार के भावों की प्रबलता को प्राप्त करता है तब उसके नेत्रों से जल बाहर आता है इसी को अश्रु कहते है।

**''अश्रु नेत्रोद्भवं वारि क्रोधदुःखप्रहर्षजम्।।''**

**प्रलय–**

जब मनुष्य अत्यधिक सुख या अत्यधिक दुःख की स्थिति को प्राप्त करता है तब वह चेष्टा अर्थात् करने की इच्छा और ज्ञान से शून्य की स्थिति को प्राप्त करता है और इसी स्थिति को प्रलय शब्द से अभिहित किया गया है। यथा –

**''प्रलयः सुखदुःखाभ्यां चेष्टाज्ञाननिराकृतिः।।''**

## 11.9 स्थायी भाव

जिनके सहयोग से रस की निष्पत्ति होती है वे विभाव, अनुभाव, संचारी भाव स्थायी भाव के ही आश्रयीभूत अंग है। इस सम्बन्ध में नाट्यशास्त्र एक युक्ति प्रस्तुत करता है कि जिस प्रकार सभी मनुष्यों में उनका राजा प्रधान होता है और सभी शिष्यों में गुरु

ही प्रधान होता है इसी तरह सभी भावों में स्थायी भाव ही श्रेष्ठ होता है तथा सभी में प्रधान होता है। यथा –

**''यथा नराणां नृपतिः शिष्याणां च यथा गुरुः।**
**एवं हि सर्वभावानां भावः स्थायी महानिह।।''**

**(नाट्यशास्त्र, 7/8)**

दशरूपककार ने स्थायी भाव को समुद्र के रूप में माना है वे कहते हैं कि जिस प्रकार नमक युक्त जल और मधुर द्रव्य युक्त जल यदि समुद्र में मिला दिये जाएं तो समुद्र उन दोनों जल को अपने में आत्मसात कर एकरूप बना लेता है वैसे ही यह स्थायी भाव सकल भावों के समूह को अपने में समाहित कर लेता है। इस प्रकार सहायक भाव तथा नष्ट करने वाले भाव के द्वारा जिस भाव को नष्ट नहीं किया जा सकता है उसे स्थायी भाव कहा जाता है। यथा –

**''विरुद्धैरविरुद्धैर्वा भावैर्विच्छिद्यते न यः।**
**आत्मभावं नयत्यन्यान् स स्थायी लवणाकरः।।''**

**(दशरूपक, 4/34)**

स्थायी भावों के आठ भेद प्राप्त होते हैं जो प्रत्येक रस से सम्बन्धित होते हैं वे इस प्रकार हैं – रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय । ये आठ भेद आचार्य भरत मुनि के द्वारा स्वीकार किये गये हैं। आचार्य मम्मट ने अपने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ काव्यप्रकाश में इनके अतिरिक्त एक नवम रस शान्त रस को भी स्वीकार किया है जिसका स्थायी भाव निर्वेद कहा है। इस प्रकार काव्य प्रकाश में नौ स्थायी भाव प्राप्त होते हैं। आचार्य विश्वनाथ नौवें स्थायी भाव के रूप में शम को मानते हैं। यथा –

**''रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहो भयं तथा।**
**जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्त्तिताः।।''**

**(काव्यप्रकाश, 4/30)**

और नौवां स्थायी भाव है– निर्वेद। द्रष्टव्य– **''निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति''**।

## 11.10 सारांश

इस इकाई में हमने रस की परिभाषा, रस का स्वस्प, रस निष्पत्ति के उपादान, भाव, विभाव, अनुभाव, सात्त्विक भाव तथा स्थायी भावों को जाना है। जब कोई मनुष्य किसी भी प्रकार की अनुभूति प्राप्त करता है और उस अनुभूति के अनुसार उसके शरीर तथा व्यवहार में जो विकार दिखाई देते हैं वे विविध प्रकार के प्राप्त होते हैं। मानिये कि कोई व्यक्ति अपने प्राणों की रक्षा के लिए इधर – उधर भाग रहा है इससे लोक में जो उसे देखेगा वो उसे भयभीत कहेगा क्योंकि वह उससे डर रहा है और अपने प्राण बचाना चाहता है इसी को शास्त्र में भयानक रस कहेंगे और भय को उसका स्थायी रूप कहेगें। जब कोई व्यक्ति अपनी मृत्यु को सामने देख ले तो वह स्तब्ध हो जायेगा, उसकी वाणी अवरुद्ध हो जायेगी, उसके रोम तन्तु खड़े हो जायेगें इन संवेगों को सात्त्विक भाव कहते हैं। मनुष्य का जो मानसिक विकार है, वह भाव कहा जाता है। रस को पहचानने में कुछ कारणात्मक भाव होते हैं जैसे भयभीत व्यक्ति का भागना

और छिपना। उन्हें ही विभाव कहा जाता है। रस की अनुभूति के पश्चात् जो भाव उत्पन्न होते हैं उन्हे अनुभाव कहते हैं। इस प्रकार हमने इस इकाई में हमने रस तथा भावों का ज्ञान प्राप्त किया।

## 11.11 शब्दावली

रस – आस्वादन योग्य तत्त्व

भाव – सुखदुःखादि मानसिक विकार

विभाव – रस के निमार्ण में कारण

अनुभाव – रस आस्वादन के बाद का कार्य

सात्त्विकभाव – परिणाम स्वरूप भाव

स्थायी भाव – सभी रसों को व्यक्त करने वाले भाव

## 11.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. नाट्यशास्त्र, भरतमुनि, व्याख्याकार– बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, वि. सं. 2065
2. नाट्यशास्त्र, भरतमुनिकृत, सम्पादक मधुसूदन शास्त्री, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।
3. दशरूपक, धनंजय, हिन्दी टीकाकार– डॉ. भोला शंकर व्यास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2000।

## 11.13 बोध प्रश्न

1. रस किसे कहते हैं? परिभाषित कीजिए।
2. रस उत्पत्ति के उपादान क्या हैं?
3. भाव को परिभाषित कीजिए?
4. विभाव किसे कहते हैं? समझाइए।
5. अनुभाव किसे कहते हैं? रसनिष्पत्ति में इनकी क्या भूमिका है?
6. सात्त्विक भाव किसे कहते हैं?
7. स्थायीभाव किसे कहते हैं?
8. भरतमुनि का रससूत्र लिखकर समझाइए।